

# संविधान की प्रस्तावना (Preamble of the Constitution)

सर्वप्रथम अमेरिकी संविधान में प्रस्तावना को सम्मिलित किया गया था तदुपरांत कई अन्य देशों ने इसे अपनाया, जिनमें भारत भी शामिल है। प्रस्तावना संविधान के परिचय अथवा भूमिका को कहते हैं। इसमें संविधान का सार होता है। प्रख्यात न्यायविद् व संवैधानिक विशेषज्ञ एन.ए. पालकीवाला ने प्रस्तावना को 'संविधान का परिचय पत्र' कहा है।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना पंडित नेहरू द्वारा बनाए और पेश किए गए एवं संविधान सभा द्वारा अपनाए गए 'उद्देश्य प्रस्ताव' पर आधारित है। इसे 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा संशोधित किया गया, जिसने इसमें समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष और अखंडता शब्द सम्मिलित किए।

## संविधान के प्रस्तावना की विषय-वस्तु

अपने वर्तमान स्वरूप में प्रस्तावना को इस प्रकार पढ़ा जाता है:

“हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए और इसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, धर्म, विश्वास व उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा

व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता तथा अखंडता सुनिश्चित करने वाला, बंधुत्व बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्पित होकर

अपनी इस संविधान सभा में आज दिनांक 26 नवंबर, 1949 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।”

## प्रस्तावना के तत्व

प्रस्तावना में चार मूल तत्व हैं:

- 1. संविधान के अधिकार का स्रोत:** प्रस्तावना कहती है कि संविधान भारत के लोगों से शक्ति अधिगृहीत करता है।
- 2. भारत की प्रकृति:** यह घोषणा करती है कि भारत एक संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक व गणतांत्रिक राजव्यवस्था वाला देश है।
- 3. संविधान के उद्देश्य:** इसके अनुसार न्याय, स्वतंत्रता, समता व बंधुत्व संविधान के उद्देश्य हैं।
- 4. संविधान लागू होने की तिथि:** यह 26 नवंबर, 1949 की तिथि का उल्लेख करती है।

## प्रस्तावना में मुख्य शब्द

प्रस्तावना में कुछ मुख्य शब्दों का उल्लेख किया गया है। ये शब्द हैं—संप्रभुता, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक, गणराज्य, न्याय, स्वतंत्रता, समता व बंधुत्व। इनका विस्तार से उल्लेख नीचे किया गया है:

### 1. संप्रभुता

संप्रभु शब्द का आशय है कि, भारत न तो किसी अन्य देश पर निर्भर है और न ही किसी अन्य देश का डोमिनियन है<sup>2</sup>। इसके ऊपर और कोई शक्ति नहीं है और यह अपने मामलों (आंतरिक अथवा बाहरी) का निःतारण करने के लिए स्वतंत्र है।

यद्यपि वर्ष 1949 में भारत ने राष्ट्रमंडल की सदस्यता स्वीकार करते हुए ब्रिटेन को इसका प्रमुख माना, तथापि संविधान से अलग यह घोषणा किसी भी तरह से भारतीय संप्रभुता<sup>3</sup> को प्रभावित नहीं करती। इसी प्रकार भारत की संयुक्त राष्ट्र में सदस्यता उसकी संप्रभुता को किसी मायने में सीमित नहीं करती।

एक संप्रभु राज्य होने के नाते भारत किसी विदेशी सीमा अधिग्रहण अथवा किसी अन्य देश के पक्ष में अपनी सीमा के किसी हिस्से पर से दावा छोड़ सकता है<sup>4</sup>।

### 2. समाजवादी

वर्ष 1976 के 42वें संविधान संशोधन से पहले भी भारत के संविधान में नीति-निदेशक सिद्धांतों के रूप में समाजवादी लक्षण मौजूद थे। दूसरे शब्दों में, जो बात पहले संविधान में अंतर्निहित थी, उसे स्पष्ट रूप से जोड़ दिया गया और फिर कांग्रेस पार्टी ने समाजवादी स्वरूप को स्थापित करने के लिए 1955 में अवाडी सत्र में एक प्रस्ताव<sup>5</sup> पारित कर उसके अनुसार कार्य किया।

यह बात ध्यान देने योग्य है कि भारतीय समाजवाद 'लोकतांत्रिक समाजवाद' है न कि 'साम्यवादी समाजवाद', जिसे 'राज्याश्रित समाजवाद' भी कहा जाता है, जिसमें उत्पादन और वितरण के सभी साधनों का राष्ट्रीयकरण और निजी संपत्ति का उन्मूलन शामिल है। लोकतांत्रिक समाजवाद मिश्रित अर्थव्यवस्था में आस्था रखता है, जहां सार्वजनिक व निजी क्षेत्र साथ-साथ<sup>6</sup> मौजूद रहते हैं। जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय कहता है, "लोकतांत्रिक समाजवाद का उद्देश्य गरीबी, उपेक्षा, बीमारी व अवसर की असमानता<sup>7</sup> को समाप्त करना है।" भारतीय समाजवाद मार्क्सवाद और गांधीवाद का मिला-जुला रूप है, जिसमें गांधीवादी समाजवाद की ओर ज्यादा झुकाव है<sup>8</sup>।

उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की नयी आर्थिक नीति (1991) ने हालांकि भारत के समाजवादी प्रतिरूप को थोड़ा लचीला बनाया है।

### 3. धर्मनिरपेक्ष

धर्मनिरपेक्ष शब्द को भी 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा जोड़ा गया। जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने भी 1974 में कहा था। यद्यपि 'धर्मनिरपेक्ष राज्य'<sup>9</sup> शब्द का स्पष्ट रूप से संविधान में उल्लेख नहीं किया गया था तथापि इसमें कोई संदेह नहीं है कि, संविधान के निर्माता ऐसे ही राज्य की स्थापना करना चाहते थे। इसीलिए संविधान में अनुच्छेद 25 से 28 (धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार) जोड़े गए।

भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता की सभी अवधारणाएं विद्यमान हैं अर्थात् हमारे देश में सभी धर्म समान हैं और उन्हें सरकार का समान समर्थन प्राप्त है<sup>10</sup>।

### 4. लोकतांत्रिक

संविधान की प्रस्तावना में एक लोकतांत्रिक<sup>11</sup> राजव्यवस्था की परिकल्पना की गई है। यह प्रचलित संप्रभुता के सिद्धांत पर आधारित है अर्थात् सर्वोच्च शक्ति जनता के हाथ में हो।

लोकतंत्र दो प्रकार का होता है—प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष। प्रत्यक्ष लोकतंत्र में लोग अपनी शक्ति का इस्तेमाल प्रत्यक्ष रूप से करते हैं, जैसे-स्विट्जरलैंड में। प्रत्यक्ष लोकतंत्र के चार मुख्य औजार हैं, इनके नाम हैं—**परिपृच्छा (Referendum)**, **पहल (Initiative)**, **प्रत्यावर्तन या प्रत्याशी को वापस बुलाना (Recall)** तथा **जनमत संग्रह (Plebiscite)**<sup>12</sup>। दूसरी ओर अप्रत्यक्ष लोकतंत्र में लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधि सर्वोच्च शक्ति का इस्तेमाल करते हैं और सरकार चलाते हुए कानूनों का निर्माण करते हैं। इस प्रकार के लोकतंत्र को प्रतिनिधि लोकतंत्र भी कहा जाता है। यह दो प्रकार का होता है—संसदीय और राष्ट्रपति के अधीन।

भारतीय संविधान में प्रतिनिधि संसदीय लोकतंत्र की व्यवस्था है, जिसमें कार्यकारिणी अपनी सभी नीतियों और कार्यों के लिए विधायिका के प्रति जवाबदेह है। वयस्क मताधिकार, सामयिक चुनाव, कानून की सर्वोच्चता, न्यायपालिका की स्वतंत्रता व भेदभाव का अभाव भारतीय राज्यव्यवस्था के लोकतांत्रिक लक्षण के स्वरूप हैं।

संविधान की प्रस्तावना में लोकतांत्रिक शब्द का इस्तेमाल बृहद रूप में किया है, जिसमें न केवल राजनीतिक लोकतंत्र बल्कि सामाजिक व आर्थिक लोकतंत्र को भी शामिल किया गया है।

इस आयाम पर डॉ. अम्बेडकर ने 25 नवम्बर, 1949 को संविधान सभा में दिए गए अपने समापन भाषण में विशेष बल देते हुए कहा था—

“राजनीतिक लोकतंत्र तब तक स्थाई नहीं बन सकता जब तक कि उसके मूल में सामाजिक लोकतंत्र नहीं हो। सामाजिक लोकतंत्र का क्या अर्थ है? इसका अर्थ है—वह जीवन शैली जो स्वाधीनता, समानता तथा भ्रातृत्व को मान्यता देती हो। स्वाधीनता, समानता और भ्रातृत्व के सिद्धांतों को अलग से एक त्रयी के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। ये आपस में मिलकर एक त्रयी की रचना इस अर्थ में करते हैं कि यदि इनमें से एक को भी अलग कर दिया जाए तो लोकतंत्र का उद्देश्य ही पराजित हो जाता है। स्वाधीनता को समानता से अलग नहीं किया जा सकता और समानता को स्वाधीनता से अलग नहीं किया जा सकता उसी प्रकार स्वाधीनता और समानता को भ्रातृत्व या बंधुत्व से भी अलग नहीं किया जा सकता। समानता के अभाव में स्वाधीनता से कुछ का आधिपत्य अनेक पर स्थापित होने की स्थिति बनेगी। समानता बिना स्वाधीनता के, वैयक्तिक पहल अथवा उद्यम को समाप्त कर देगी।”<sup>12a</sup>

इसी संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय ने 1997 में व्यवस्था दी, “संविधान एक समत्वपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की स्थापना का लक्ष्य रखता है, जिससे कि प्रत्येक नागरिक को भारत गणराज्य के सामाजिक सर्व आर्थिक लोकतंत्र में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्रदान किया जा सके।”

## 5. गणतंत्र

एक लोकतांत्रिक राज्यव्यवस्था को दो वर्गों में बांटा जा सकता है—राजशाही और गणतंत्र। राजशाही व्यवस्था में राज्य का प्रमुख (आमतौर पर राजा या रानी) उत्तराधिकारिता के माध्यम से पद पर आसीन होता है; जैसा कि ब्रिटेन में। वहीं गणतंत्र में राज्य प्रमुख हमेशा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से एक निश्चित समय के लिए चुनकर आता है, जैसे—अमेरिका।

इसलिए भारतीय संविधान की प्रस्तावना में गणतंत्र का अर्थ यह है कि भारत का प्रमुख अर्थात् राष्ट्रपति चुनाव के जरिए सत्ता में आता है। उसका चुनाव पांच वर्ष के लिए अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है।

गणतंत्र के अर्थ में दो और बातें शामिल हैं। पहली यह कि राजनैतिक संप्रभुता किसी एक व्यक्ति जैसे राजा के हाथ में होने की बजाए लोगों के हाथ में होती है और दूसरी, किसी भी विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग की अनुपस्थिति। इसलिए हर सार्वजनिक कार्यालय बगैर किसी भेदभाव के प्रत्येक नागरिक के लिए खुला होगा।

## 6. न्याय

प्रस्तावना में न्याय तीन भिन्न रूपों में शामिल हैं—सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक। इनकी सुरक्षा मौलिक अधिकार व नीति निर्देशक सिद्धांतों के विभिन्न उपबंधों के जरिए की जाती है।

सामाजिक न्याय का अर्थ है—हर व्यक्ति के साथ जाति, रंग, धर्म, लिंग के आधार पर बिना भेदभाव किए समान व्यवहार। इसका मतलब है समाज में किसी वर्ग विशेष के लिए विशेषाधिकारों की अनुपस्थिति और अनुसूचित जाति, जनजाति, अन्य पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं की स्थिति में सुधार।

आर्थिक न्याय का अर्थ है कि आर्थिक कारणों के आधार पर किसी भी व्यक्ति से भेदभाव नहीं किया जाएगा। इसमें संपदा, आय व संपत्ति की असमानता को दूर करना भी शामिल है। सामाजिक न्याय और आर्थिक न्याय का मिला-जुला रूप ‘अनुपाती न्याय’ को परिलक्षित करता है।

राजनीतिक न्याय का अर्थ है कि हर व्यक्ति को समान राजनीतिक अधिकार प्राप्त होंगे, चाहे वो राजनीतिक दफ्तरों में प्रवेश की बात हो अथवा अपनी बात सरकार तक पहुंचाने का अधिकार।

सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक न्याय के इन तत्वों को 1917 की रूसी क्रांति से लिया गया है।

## 7. स्वतंत्रता

स्वतंत्रता का अर्थ है—लोगों की गतिविधियों पर किसी प्रकार की रोकटोक की अनुपस्थिति तथा साथ ही व्यक्ति के विकास के लिए अवसर प्रदान करना।

प्रस्तावना हर व्यक्ति के लिए मौलिक अधिकारों के जरिए अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता सुरक्षित करती है। इनके हनन के मामले में कानून का दरवाजा खटखटाया जा सकता है।

जैसा कि प्रस्तावना में कहा गया है कि भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था को सफलतापूर्वक चलाने के लिए स्वतंत्रता परम आवश्यक है। हालांकि स्वतंत्रता का अभिप्राय यह नहीं है कि हर व्यक्ति को कुछ भी करने का लाइसेंस मिल गया हो। स्वतंत्रता के अधिकार का इस्तेमाल संविधान में लिखी सीमाओं के भीतर ही किया जा सकता है। संक्षेप में कहा जाए तो प्रस्तावना में प्रदत्त स्वतंत्रता एवं मौलिक अधिकार शर्तहीन नहीं हैं।

हमारी प्रस्तावना में स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के आदर्शों को फ्रांस की क्रांति (1789-1799 ई.) से लिया गया है।

## 8. समता

समता का अर्थ है—समाज के किसी भी वर्ग के लिए विशेषाधिकार की अनुपस्थिति और बिना किसी भेदभाव के हर व्यक्ति को समान अवसर प्रदान करने के उपबंध।

भारतीय संविधान की प्रस्तावना हर नागरिक को स्थिति और अवसर की समता प्रदान करती है। इस उपबंध में समता के तीन आयाम शामिल हैं—नागरिक, राजनीतिक व आर्थिक।

मौलिक अधिकारों पर निम्न प्रावधान नागरिक समता को सुनिश्चित करते हैं:

- (अ) विधि के समक्ष समता (अनुच्छेद-14)।
- (ब) धर्म, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर मूलवंश निषेध (अनुच्छेद-15)।
- (स) लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता (अनुच्छेद-16)।
- (द) अस्पृश्यता का अंत (अनुच्छेद-17)।
- (इ) उपाधियों का अंत (अनुच्छेद-18)।

संविधान में दो ऐसे उपबंध हैं, जो राजनीतिक समता को सुनिश्चित करते प्रतीत होते हैं। प्रथम है कि धर्म, जाति, लिंग अथवा वर्ग के आधार पर किसी व्यक्ति को मतदाता सूची में शामिल होने के अयोग्य करार नहीं दिया जाएगा (अनुच्छेद-325) तथा दूसरा है, लोकसभा और विधानसभाओं के लिए वयस्क मतदान का प्रावधान (अनुच्छेद-326)।

राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत (अनुच्छेद-39) महिला तथा पुरुष को जीवन यापन के लिए पर्याप्त साधन और समान काम के लिए समान वेतन के अधिकार को सुरक्षित करते हैं।

## 9. बंधुत्व

बंधुत्व का अर्थ है—भाईचारे की भावना। संविधान एकल नागरिकता के एक तंत्र के माध्यम से भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित करता है। मौलिक कर्तव्य (अनुच्छेद-51क) भी कहते हैं कि यह हर भारतीय नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह धार्मिक, भाषायी, क्षेत्रीय अथवा वर्ग विविधताओं से ऊपर उठ सौहार्द और आपसी भाईचारे की भावना को प्रोत्साहित करेगा।

प्रस्तावना कहती है कि बंधुत्व में दो बातों को सुनिश्चित करना होगा। पहला, व्यक्ति का सम्मान और दूसरा, देश की एकता और अखंडता। अखंडता शब्द को 42वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रस्तावना में जोड़ा गया।

संविधान सभा की प्रारूप समिति के एक सदस्य के.एम. मुंशी के अनुसार, 'व्यक्ति के गौरव' का अर्थ यह है कि संविधान न केवल

वास्तविक रूप में भलाई तथा लोकतांत्रिक तंत्र की मौजूदगी सुरक्षित करता है बल्कि यह भी मानता है कि हर व्यक्ति का व्यक्तित्व पवित्र है। इस पर किसी व्यक्ति के गौरव को सुनिश्चित करने वाले मौलिक अधिकार और नीति-निदेशक तत्वों के कुछ प्रावधान बल देते हैं। इसके अलावा मौलिक कर्तव्यों (51-क) में कहा गया है कि, भारत के हर नागरिक की यह जिम्मेदारी होगी कि वह स्त्री के गौरव को ठेस पहुंचाने वाली किसी भी हरकत का त्याग करे और भारत की संप्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे।

'देश की एकता और अखंडता' पद में राष्ट्रीय अखंडता के दोनों मनोवैज्ञानिक और सीमायी आयाम शामिल हैं। संविधान के अनुच्छेद 1 में भारत का वर्णन 'राज्यों के संघ' के रूप में किया गया है ताकि यह बात स्पष्ट हो जाए कि राज्यों को संघ से अलग होने का कोई अधिकार नहीं है। इससे भारतीय संघ की बदली न जा सकने वाली प्रकृति का परिलक्षण होता है। इसका उद्देश्य राष्ट्रीय अखंडता के लिए बाधक, सांप्रदायिकता, क्षेत्रवाद, जातिवाद, भाषावाद इत्यादि जैसी बाधाओं पर पार पाना है।

## प्रस्तावना का महत्व

प्रस्तावना में उस आधारभूत दर्शन और राजनीतिक, धार्मिक व नैतिक मौलिक मूल्यों का उल्लेख है जो हमारे संविधान के आधार हैं। इसमें संविधान सभा की महान और आदर्श सोच उल्लिखित है। इसके अलावा यह संविधान की नींव रखने वालों के सपनों और अभिलाषाओं का परिलक्षण करती है। संविधान निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले संविधान सभा के अध्यक्ष सर अल्लादी कृष्णस्वामी अय्यर के शब्दों में, "संविधान की प्रस्तावना हमारे दीर्घकालिक सपनों का विचार है।"

संविधान सभा की प्रारूप समिति के सदस्य के.एम. मुंशी के अनुसार, प्रस्तावना 'हमारी संप्रभु लोकतांत्रिक गणराज्य का भविष्यफल है।'

संविधान सभा के एक अन्य सदस्य पंडित ठाकुर दास भार्गव ने संविधान की प्रस्तावना के संबंध में कहा, 'प्रस्तावना संविधान का सबसे सम्मानित भाग है। यह संविधान की आत्मा है। यह संविधान की कुंजी है। यह संविधान का आभूषण है। यह एक उचित स्थान है जहां से कोई भी संविधान का मूल्यांकन कर सकता है।'

सुप्रसिद्ध अंग्रेज राजनीतिशास्त्री सर अर्नेस्ट बार्कर संविधान की प्रस्तावना लिखने वालों को राजनीतिक बुद्धिजीवी कहकर अपना सम्मान देते हैं। वह प्रस्तावना को संविधान का 'कुंजी नोट'<sup>13</sup> कहते हैं। वह प्रस्तावना के पाठ<sup>14</sup> से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक *प्रिसिपल्स ऑफ सोशल एंड पॉलिटिकल थ्योरी* (1951) की शुरुआत में इसका उल्लेख किया है।

भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एम हिदायतुल्लाह मानते हैं, “प्रस्तावना अमेरिका की स्वतंत्रता की घोषणा के समान है, लेकिन यह एक घोषणा से भी ज्यादा है। यह हमारे संविधान की आत्मा है जिसमें हमारे राजनीतिक समाज के तौर-तरीकों को दर्शाया गया है। इसमें गंभीर संकल्प शामिल हैं, जिन्हें एक क्रांति ही परिवर्तित कर सकती है<sup>15</sup>।”

## संविधान के एक भाग के रूप में प्रस्तावना

प्रस्तावना को लेकर एक विवाद रहता है कि क्या यह संविधान का एक भाग है या नहीं।

बेरूबाड़ी संघ मामले (1960)<sup>16</sup> में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रस्तावना संविधान में निहित सामान्य प्रयोजनों को दर्शाता है और इसलिए संविधान निर्माताओं के मस्तिष्क के लिए एक कुंजी है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद में प्रयोग की गई व्यवस्थाओं के अनेक अर्थ निकलते हैं। इस व्यवस्था के उद्देश्य को प्रस्तावना में शामिल किया गया है। प्रस्तावना की विशेषता को स्वीकारने के लिए इस उद्देश्य के बारे में व्याख्या करते हुए उच्चतम न्यायालय ने कहा कि प्रस्तावना संविधान का भाग नहीं है।

केशवानंद भारती मामले (1973)<sup>17</sup> में उच्चतम न्यायालय ने पूर्व व्याख्या को अस्वीकार कर दिया और यह व्यवस्था दी कि प्रस्तावना संविधान का एक भाग है। यह महसूस किया गया कि प्रस्तावना संविधान का अति महत्वपूर्ण हिस्सा है और संविधान की प्रस्तावना में उल्लिखित महान विचारों को ध्यान में रखकर संविधान का अध्ययन किया जाना चाहिए। एल.आई.सी. ऑफ इंडिया मामले (1995)<sup>18</sup> में भी पुनः उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि प्रस्तावना संविधान का आंतरिक हिस्सा है।

संविधान के अन्य भागों की तरह ही संविधान सभा ने प्रस्तावना को भी बनाया परन्तु तब जबकि अन्य भाग पहले से ही बनाये जा चुके थे। प्रस्तावना को अंत में शामिल किए जाने का कारण यह था कि इसे सभा द्वारा स्वीकार किया गया। जब प्रस्तावना पर मत

व्यक्त किया जाने लगा तो संविधान सभा के अध्यक्ष ने कहा, ‘प्रश्न यह है कि क्या प्रस्तावना संविधान का भाग है<sup>19</sup>।’ इस प्रस्ताव को तब स्वीकार कर लिया गया। लेकिन उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्तमान मत दिए जाने के बाद कि प्रस्तावना संविधान का भाग है, यह संविधान के जनकों के मत से साम्यता रखता है।

दो तथ्य उल्लेखनीय हैं:

1. प्रस्तावना न तो विधायिका की शक्ति का स्रोत है और न ही उसकी शक्तियों पर प्रतिबंध लगाने वाला।
2. यह गैर-न्यायिक है अर्थात् इसकी व्यवस्थाओं को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।

## प्रस्तावना में संशोधन की संभावना

क्या प्रस्तावना में संविधान की धारा 368 के तहत संशोधन किया जा सकता है। यह प्रश्न पहली बार ऐतिहासिक केस केशवानंद भारती मामले (1973) में उठा। यह विचार सामने आया कि इसमें संशोधन नहीं किया जा सकता क्योंकि यह संविधान का भाग नहीं है। याचिकाकर्ता ने कहा कि अनुच्छेद 368 के जरिए संविधान के मूल तत्व व मूल विशेषताओं, जो कि प्रस्तावना में उल्लेखित हैं, को ध्वस्त करने वाला संशोधन नहीं किया जा सकता।

हालांकि उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि प्रस्तावना संविधान का एक भाग है। न्यायालय ने अपना यह मत बेरूबाड़ी संघ (1960) के तहत दिया और कहा कि प्रस्तावना को संशोधित किया जा सकता है, बशर्ते मूल विशेषताओं में संशोधन नहीं किया जाए। दूसरे शब्दों में, न्यायालय ने व्यवस्था दी कि प्रस्तावना में निहित मूल विशेषताओं को अनुच्छेद 368<sup>20</sup> के तहत संशोधित नहीं किया जा सकता।

अब तक प्रस्तावना को केवल एक बार 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 के तहत संशोधित किया गया है। इसके जरिए इसमें तीन नए शब्दों को जोड़ा गया—समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष एवं अखंडता। इस संशोधन को वैध ठहराया गया।

## संदर्भ सूची

1. नेहरू द्वारा 13 दिसंबर, 1946 को लाया गया और 22 जनवरी, 1947 को संविधान सभा ने स्वीकार किया।
2. भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम 1947 के पारित होने तक भारत ब्रिटिश शासक पर निर्भर (उपनिवेश) था। 15 अगस्त, 1947 से 26 जनवरी, 1950 तक भारत की राजनीतिक स्थिति ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल सत्ता जैसी थी। 26 जनवरी, 1950 को खुद को संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न गणराज्य घोषित कर भारत इससे मुक्त हो गया। हालांकि पाकिस्तान में 1956 तक ब्रिटिश डोमिनियन रहा।

3. संविधान सभा के कुछ सदस्यों के मन में व्याप्त शंकाओं को दूर करते हुए 1949 में पंडित नेहरू ने कहा, “हमने काफी पहले पूर्ण स्वराज प्राप्त करने की प्रतिज्ञा ली थी, हमने इसे प्राप्त भी किया है क्या कोई राष्ट्र दूसरे देश के साथ गठबंधन में अपनी स्वतंत्रता खो सकता है। गठबंधन का सामान्य मतलब वादे से है। संप्रभु राष्ट्रकुल से स्वतंत्र जुड़ाव इस तरह के वचनों के तहत नहीं हो सकता, इसकी मतबूती इसमें व्याप्त लोचशीलता एवं स्वतंत्रता में निहित है। इसलिए यह सर्वविदित है कि कोई भी सदस्य राष्ट्र अपनी इच्छानुसार राष्ट्रमण्डल छोड़ सकता है”, उन्होंने आगे कहा ‘यह एक स्वतंत्र इच्छा शक्ति वाला समझौता है, जिसे इसी रूप में छोड़ा जा सकता है।’
4. भारत संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य 1945 में बना।
5. प्रस्ताव कहता है, ‘कांग्रेस के उद्देश्यों और भारत के संविधान की प्रस्तावना, राज्य की नीति के निदेशक तत्वों में उल्लिखित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आयोजना समाज के समाजवादी प्रारूप की स्थापना को ध्यान में रखकर की जानी चाहिए, जहां उत्पादन के मुख्य साधन सामाजिक स्वामित्व या नियंत्रण में हो, उत्पादन में क्रमिक रूप से तेजी लाई जाती है और राष्ट्रीय संपत्ति का समान वितरण होता है।’
6. प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने कहा हमने हमेशा से यह कहा है कि समाजवाद का हमारा अपना ब्रांड है, हम अपनी जरूरत के अनुसार जिन क्षेत्रों में आवश्यकता होगी, उनका राष्ट्रीयकरण करेंगे, के अनुसार राष्ट्रीय उपक्रम है। सिर्फ राष्ट्रवाद ही समाजवाद का हमारा प्रकार नहीं है।
7. जी.बी.पंत कृषि एवं तकनीकी विश्वविद्यालय बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2000)।
8. नाकारा बनाम भारत संघ 1983।
9. राज्य का धर्म के प्रति व्यवहार के आधार पर 3 तरह के राज्यों को अपनाया गया।
  - (अ) नास्तिक राज्य : धर्म विरोधी राज्य जो सभी धर्मों का विरोध करता है।
  - (ब) सैद्धांतिक राज्य : ऐसा राज्य जिसका अपना विशेष धर्म होता है, जैसे-बांग्लादेश, बर्मा, श्रीलंका, पाकिस्तान आदि।
  - (स) धर्मनिरपेक्ष राज्य : ऐसा राज्य धर्म के मामले में तटस्थ रहता है और इस तरह उसका अपना कोई विशेष धर्म नहीं होता। उदाहरण के लिए अमेरिका और भारत। जी एस पांडे, कॉन्स्टीट्यूशनल लॉ ऑफ़ इंडिया, इलाहाबाद, लॉ एजेंसी आठवां संस्करण, 2002 पृष्ठ-222।
10. तत्कालीन केंद्रीय विधि मंत्री एच.आर. गोखले ने इस व्यवस्था को ऐसे परिभाषित किया, ‘जिस धर्म से आप संबंध रखते हैं उसमें आस्था और उपासना की स्वतंत्रता होगी। राज्य के पास करने के लिए कुछ नहीं होगा, सिवा इसके कि वह सभी धर्मों को समान समझे। लेकिन राज्य किसी धर्म का कोई स्थापक नहीं होगा।’ इसी तरह भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश पी.बी. गजेंद्र गडकर ने भारतीय संविधान में निहित धर्म निरपेक्षता को इस तरह परिभाषित किया, ‘राज्य किसी धर्म विशेष के प्रति समर्पित नहीं’ हो सकता, यह अधार्मिकता या धर्म विरोध नहीं है, यह सभी धर्मों को समान स्वतंत्रता प्रदान करता है।
11. ‘डेमोक्रेसी’ शब्द को दो ग्रीक शब्दों को मिलाकर बनाया गया है, डेमोस एवं क्रारिया इसका तात्पर्य क्रमशः ‘लोग’ एवं ‘शासन’ से है।
12. जनमत वह तरीका है जिसके जरिये सीधे मतदान द्वारा विधायी व्यवस्था तय होती है।
 

उपक्रम एक तरीका है जिसके जरिये लोग किसी अध्यादेश को प्रभावी बनाने के लिए विधानमंडल को कह सकते हैं।

बुलाना : यह एक तरीका है, जिसके जरिये मतदाता प्रतिनिधि को हटा सकते हैं, या एक अधिकारी को कर्तव्य पालन न करने पर उसके कार्यकाल से पहले हटा सकते हैं।

जनमत से निर्णय: सार्वजनिक महत्व के किसी मुद्दे पर इस तरीके से लोगों की राय ली जाती है। सामान्यतः इसका प्रयोग क्षेत्रीय विवाद के निपटारे के लिए किया जाता है।

12a. बी. शिवा राव, दि फ्रेमिंग ऑफ़ इंडियन कॉन्स्टीट्यूशन: सेलेक्ट ‘डाक्यूमेंट्स, वॉल्यूम IV. पी. 944



13. उन्होंने कहा कि भारतीय संविधान की प्रस्तावना से यह प्रतीत होता है, 'विस्तार में यह पुस्तक के वाद-विवाद का सारगर्भित अंश है इसलिए इसे कुंजी नोट के रूप में स्वीकारना चाहिए।'
14. उन्होंने लिखा—'मैं इसे उल्लिखित करने में गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ क्योंकि मुझे इस बात पर गर्व है कि भारत के लोगों को अपना स्वतंत्र जीवन राजनीतिक परंपरा और सिद्धांतों को शामिल कर शुरू करना चाहिए। जिस पश्चिम को हम पाश्चात्य कहते हैं, लेकिन जो अब पाश्चात्य से ज्यादा कुछ है।'
15. एम.हिदायतुल्लाह, 'डेमोक्रेसी इन इंडिया एंड द ज्यूडिशियल प्रोसेस' पृष्ठ-51
16. संविधान के अनुच्छेद 143 के तहत राष्ट्रपति द्वारा संदर्भ लिया गया, जो बेरूबाड़ी संघ और एंक्लेव परिवर्तन (1960) के बारे में भारत-पाकिस्तान समझौते को लागू करने से संबंधित था।
17. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)
18. एल.आई.सी.ऑफ इंडिया बनाम कन्जयूमर एजुकेशन एंड रिसर्च सेंटर (1995)
19. 'कॉण्स्टीट्यूट एसेंबली डिबेट्स', खंड 10, पृष्ठ-450-456
20. न्यायालय ने यह पाया कि 'हमारे संविधान की मूल भावना प्रस्तावना में उल्लिखित तत्वों पर आधारित है। यदि इनमें से किसी तत्व को हटाया जाता है तो संविधान का ढांचा अक्षुण्ण नहीं रह पायेगा तथा इसकी अखंडता भंग हो जायेगी। संसद की संशोधन की शक्ति में वे शक्तियां नहीं आतीं, जो संविधान के मूल ढांचे में संशोधन करें एवं उसकी अखंडता को नष्ट करें।'